पाठ–3

नालंदा महाविहार : एक परिचय

–रविमोहन

पाठ की संरचना

3.1 आइए शुरू करें
3.2 उद्देश्य
3.3 मूल पाठ
3.4 आइए समझें
3.5 भाषा-शैली

3.1 आइए शुरू करें

हमारा देश ज्ञान की धरती है। यहाँ अनेक ऋषि, आचार्य, तर्कशास्त्री, वैज्ञानिक हुए हैं। वैदिक काल में भी और उसके बाद भी। यहाँ अनेक विश्व प्रसिद्ध शिक्षा केन्द्र भी हुए। नालंदा उनमें से एक है। यह बौद्ध-शिक्षा का केंद्र था। इस पाठ में हम नालंदा महाविहार के संबंध में विशेष अध्ययन करेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप

- नालंदा महाविहार के बारे में लिखित या मौखिक जानकारी दे सकेंगे।
- बिहार की सांस्कृतिक विरासत में नालंदा महाविहार की भूमिका का विश्लेषण कर सकेंगे।
- प्रसिद्ध चीनी यात्री फा-ही-यान, युवान-च्वाङ्ग और इत्सिंग की भारत यात्रा का उल्लेख कर सकेंगे।
- नालंदा विश्वविद्यालय में नामांकन की प्रक्रिया, पाठ्य विषय, शिक्षार्थियों, विश्वविद्यालय की आधारभूत संरचना आदि की जानकारी दे सकेंगे।

- अन्य प्राचीन विश्वविद्यालयों से नालंदा विश्वविद्यालय की तुलना कर सकेंगे।
- शब्दों में 'इक' प्रत्यय जोड़कर नए शब्द का निर्माण कर सकेंगे।
- समास, सामासिक शब्द, समास के भेद आदि की समझ विकसित करते हुए सामाजिक शब्दों का वर्गीकरण कर सकेंगे।

3.3 मूल पाठ

नालंदा संस्कृत शब्द नालम्+दा से बना है। संस्कृत में 'नालम्' का अर्थ कमल होता है, कमल ज्ञान का प्रतीक है। 'दा', का अर्थ देने से है। नालम्+दा=नालंदा अर्थात् कमल देने वाला या ज्ञान देने वाला। दोनों ही अपने स्थान पर सत्य है। पूर्व में नालंदा में अनेक सरोवर थे, जिनसे कमल प्राप्त होते थे। काल क्रम से महाविहार की स्थापना के बाद इसका नाम नालन्दा महाविहार रखा गया, जो ज्ञान देने वाला महाविहार नालंदा विश्वविद्यालय के नाम से विख्यात हुआ।

नालंदा प्राचीन काल से ही एक समृद्ध तथा प्रगतिशील नगर था। विभिन्न बौद्ध तथा जैन ग्रंथों से एक वैभवशाली ग्राम के रूप में इस क्षेत्र की जानकारी मिलती है। लेपा नाम का एक अतिप्रसिद्ध धनी किसान यहाँ निवास करता था। ''तथागत'' ने कभी उसका आतिथ्य स्वीकार किया था। लेपा ने इस अवसर पर बड़े भवन, स्नानागार उन्हें समर्पित किये और स्वयं उनके अनुयायी हो गए। यहीं से नालंदा में विहार की स्थापना की नींव पड़ी थी।

धरोहर

छठी सदी में बौद्ध धर्म के जन्म के बाद केवल धार्मिक जीवन में ही तीव्र आन्दोलन प्रारम्भ हुआ हो, ऐसा नहीं है। शिक्षा का क्षेत्र इस झंझावात से भला अछूता कैसे रह सकता था। और, इसी शिक्षा के क्षेत्र में बौद्ध धर्म ने अपनी शैशवावस्था में ही यह बीज आरोपित किया, जिसने मौर्य काल, फिर गुप्त काल एवं अन्त में वर्धन काल में सम्राट हर्षवर्धन के समय बढ़कर एक विशाल वट वृक्ष का रूप धारण कर लिया। ऐसे ही एक महावृक्ष का नाम था। 'नालंदा विश्वविद्यालय'।

सर्वप्रथम चीनी यात्री फा-ही-यान यह सोचकर नालंदा आया था कि सारिपुत्र महाबोधिसत्त्व का जन्म और परिनिर्वाण यहाँ हुआ है। तत्पश्चात् युवान-च्वाङ्ग 637 ई० में एवं इत्सिंग 670 ई० में यहाँ आए। ये तीनों चीनी यात्री यहाँ के अगाध ज्ञान को प्राप्त करने की तीव्र उत्कंठा से नालंदा आए थे। इनमें युवान-च्वाङ्ग का विवरण उसके यात्रा वृत्तान्त एवं जीवनी लेखन से पर्याप्त प्राप्त होता है।

नालंदा का वैभव

पाटलिपुत्र (आधुनिक पटना) से 55 मील दक्षिण और राजगृह से 17 मील उत्तर में नालंदा स्थित है। नालंदा की स्थापना देश के प्रमुख राजमार्गों के मध्य में होना किसी योजनागत सोच का परिणाम रहा होगा। नालंदा विश्वविद्यालय की स्थापना उत्तर गुप्तकालीन एक शासक ने 5वीं शताब्दी में की थी। युवान-च्वाङ्ग ने लिखा है कि इस विश्वविद्यालय की स्थापना शक्रादित्य (जो संभवत: कुमार गुप्त, 414 ई० से 455 ई० और बुद्ध गुप्त 475 से 500 ई०) ने की थी। इस विश्वविद्यालय की भव्यता एवं सुन्दर अलंकरण का बखान करते कभी चीनी यात्री नहीं थकते। सम्राट हर्षवर्धन (590- से 647 ई०) ने इस विश्वविद्यालय के प्रवेश द्वारा के पास विशाल विहार स्तम्भ बनवाया था, जो 100 फीट ऊँचा था और पीतल की परत से ढँका हुआ था। पूर्व मध्यकाल में प्राप्त एक लेख से नालंदा के विशाल भवनों के बारे में पता चलता है।

युवान-च्वाङ्ग ने नालंदा में बुद्ध की एक 80 फीट ऊँची विशाल मूर्ति देखी थी। इस विश्वविद्यालय की स्थापना में विदेशों से भी अपार धन राशि प्राप्त हुई थी, इसलिए इसके निर्माण कार्य में कहीं कोई व्यवधान नहीं आया और भवनों की सजावट अन्तरराष्ट्रीय मानकों के आधार पर की गई। तत्कालीन विवरणों से पता चलता है कि इस विश्वविद्यालय में आठ मुख्य विशाल भवन थे। जिनमें एक श्रीविजय (सुमात्रा) के राजा बाल पुत्रदेव ने बनवाया था।

इन इमारतों के अलावा अनेक अन्य इमारतें थीं, जिनमें विशाल पुस्तकालय, मन्दिर, चैत्य, प्रशासनिक भवन इत्यादि सम्मिलित थे। इन इमारतों का निर्माण एवं नवीकरण पाँचवीं शताब्दी से लेकर 700 वर्षों तक अनवरत चलता रहा।

नालंदा से प्राप्त अवशेषों को देखकर विश्वविद्यालय उत्खननकर्त्ता कनिंघम ने कहा था-''यहाँ पाई गई शिल्पकला समस्त भारत में प्राप्त कला से सुन्दर है।''

नालंदा विश्वविद्यालय में प्रवेश

नालंदा में लगभग 10,000 विद्यार्थी एवं 1510 आचार्य थे। यहाँ पर न केवल भारत के कोने-कोने से बल्कि यूँ कहें कि वृहत्तर भारत, जिसमें कोरिया, तिब्बत, मंगोलिया, श्रीलंका, सुमात्रा, बालीद्वीप, जावा, इण्डोनेशिया, थाइलैण्ड एवं समस्त पूर्वी द्वीप समूहों के विद्यार्थी ज्ञानार्जन के लिए आते थे। यहाँ स्थान सीमित थे और प्रवेश लेने वाले विद्यार्थियों की संख्या बहुत अधिक थी। इसलिए आधुनिक प्रतियोगी परीक्षाओं की तरह ही यहाँ भी प्रवेश-परीक्षा आयोजित होती थी और इसमें उत्तीर्ण होना अनिवार्य था। प्रवेश-परीक्षा लेने के लिए अनेक विशेषज्ञों की अध्यक्षता में दल बने हए थे, जिन्हें 'द्वार-पंडित' कहा जाता था। इन विशेषज्ञों के द्वारा अनुशंसित

विद्यार्थी ही अन्तिम रूप से प्रवेश पाने के पात्र होते थे। प्रवेश परीक्षा में धार्मिक एवं लौकिक जीवन के संदर्भ में प्रश्न पूछे जाते थे और विद्यार्थियों की सामान्य बुद्धि एवं सहज ज्ञान की विशेषताओं का विश्लेषणात्मक मूल्यांकन किया जाता था। विद्यार्थी के संस्कार की भी समीक्षा की जाती थी। कुल मिलाकर प्रवेश-प्रक्रिया अत्यन्त कठिन थी और बहुत कम ही विद्यार्थी सफल हो पाते थे। युवान-च्वाङ्ग ने लिखा है–

''विदेशों के प्रवेशेच्छुक विद्यार्थियों में से अधिकांश को परीक्षा के प्रश्न इतने कठिन लगते थे कि वे स्वयं अपना नाम वापस ले लेते थे। किन्तु प्राचीन एवं नवीन विधाओं में पारंगत व्यक्तियों को प्रवेश मिल जाता था। दस में से केवल दो या तीन व्यक्ति सफल होते थे।''

अध्ययन के लिए दो प्रकार के छात्र होते थे। एक वे, जो विद्याध्ययन के पश्चात् बौद्ध भिक्षुक बनकर संघ में प्रवेश करते थे, और दूसरा वे विद्यार्थी, जो विद्याध्ययन के पश्चात् सांसारिक जीवन में जाते थे। ऐसे विद्यार्थी 'ब्रह्मचारी' या 'मानव' कहलाते थे। जो लोग भिक्षुक बनने के इच्छुक न थे, किन्तु यहाँ अध्ययन करना चाहते थे, उन्हें अपना भोजन-व्यय स्वयं उठाना पड़ता था या फिर विश्वविद्यालय के लिए शारीरिक श्रम करना पड़ता था। विश्वविद्यालय के कार्यक्रमों का नियमन 'कर्मदान' नामक अधिकारी करता था। वह यह भी निश्चित करता था कि किस विद्यार्थी को क्या-क्या काम करना है। यदि कोई विद्यार्थी अपनी विद्वता का कोई उल्लेखनीय प्रमाण किसी क्षेत्र में दे देता, तो उसे शारीरिक-श्रम से मुक्ति मिल सकती थी।

नालंदा में अध्यापन

नालंदा में दो प्रकार के पाठ्यक्रम थे- एक प्रारंभिक शिक्षा तथा दूसरा उच्च शिक्षा । प्रारंभिक शिक्षा के लिए न्यूनतम आयु छः वर्ष और अधिकतम आठ वर्ष थी। प्रारंभिक पाठ्यपुस्तक का नाम 'सिद्धिरस्तु' था, जिसमें वर्णमाला के 49 अक्षर होते थे। दूसरी पुस्तक, जिसकी शुरुआत 8 वर्ष की अवस्था से होती थी, उसमें पाणिनि का व्याकरण होता था, जिसमें 1000 सूत्र होते थे। इस पुस्तक को कंठस्थ करने में लगभग 8 से 10 माह लग जाते थे। इसके बाद ''धातु'' और ''कशिकावृत्ति'' का अध्ययन होता था।

यद्यपि नालंदा मूल रूप से बौद्ध अध्ययन का केन्द्र था। किन्तु उसके पाठ्यक्रम में हिन्दू धर्म के पवित्र ग्रन्थ, दर्शनशास्त्र एवं चिकित्साशास्त्र मुख्य विषय थे। इसके अतिरिक्त तर्कशास्त्र और विभिन्न धार्मिक ग्रन्थों की गूढ़ व्याख्या भी प्रधान विषय थे। यहाँ के सभी विद्यार्थी महायान पंथ तथा 18 सम्प्रदायों के ग्रन्थों का अध्ययन करते थे।

चिकित्सा का प्रारम्भिक अध्ययन सभी विद्यार्थियों के लिए अनिवार्य था। चिकित्सा विद्या के अध्ययन में निम्नलिखित बातें सिखाई जाती थीं-प्रत्येक बीमारी को पहचानना तथा जड़ी-बूटियों के आधार पर इनका उपचार करने का सिद्धान्त, शल्य चिकित्सा से वमन कराने, पेट का मल बाहर निकालने और गुड़ तथा तैलीय औषधि आमाशय में चढ़ाने की शिक्षा, चीरने, छेदने, भीतर की चीजों को बाहर निकालने, घाव साफ करने व सुखाने, तीखे दर्द कम करने वाले मलहमों का उपयोग करने और दागने में शल्य चिकित्सा के औजार को ठीक-ठाक साधने का प्रशिक्षण इत्यादि। इत्सिंग ने लिखा है कि चिकित्सा विज्ञान के प्राथमिक ज्ञान की अनिवार्यता सभी को थी, यहाँ तक भिक्षु भी इससे अछूते नहीं थे।

नालंदा और युवानच्वाङ्ग

युवान च्वाङग 637 ई० में नालंदा पहुँचा। भिक्षु-युवान-च्वाङ्ग को ''यात्रियों का राजकुमार'', ''नीति का पंडित'' और ''वर्तमान शाक्यमुनि'' कहते हैं। इस व्यक्ति ने भारत के वर्णन के अतिरिक्त नालंदा विश्वविद्यालय के विषय में पर्याप्त जानकारी प्रदान की है। पवित्र भारत-भूमि को स्पर्श करने के बाद उसने लिखा था-''आप समझ सकते हैं कि मेरे भीतर बुद्ध के नियम को स्वयं जाकर खोजने और प्राचीन स्मारकों को देखने की इच्छा प्रबल है ताकि मैं अत्यन्त श्रद्धापूर्वक उनके पद चिह्नों पर चल सकूँ।''

युवान-च्वाङ्ग ने नालंदा विश्वविद्यालय में प्रवेश लेने के बाद वहाँ के शिक्षा के बारे में लिखा है कि-''भारत में हजारों मठ हैं, किन्तु इस मठ के समान सौन्दर्य, सम्पत्ति और ऊँची इमारतें कहीं भी नहीं हैं। भीतर और बाहर मिलाकर 10000 विद्यार्थी हैं और सभी महायान सिद्धान्त के अनुयायी हैं। अठारह सम्प्रदायों के विद्यार्थी यहाँ एक हैं और वेद जैसे लोकप्रिय ग्रन्थों से लेकर चिकित्सा शास्त्र, तंत्र-विद्याओं और गणित जैसे विषयों के ग्रन्थों का अध्ययन यहाँ करते हैं। मठ के भीतर सौ मंच प्रतिदिन लोगों से भरे रहते हैं और विद्यार्थी एक क्षण भी नष्ट न करके अपने गुरुओं के प्रवचन को ध्यानपूर्वक सुनते हैं।''

महान् विद्वान् एक सौ छः वर्षीय शीलभद्र उस समय नालंदा विश्वविद्यालय के कुलपति थे। उन्हीं के शिष्यत्व में युवान-च्वाङ्ग ने महायान दर्शन का संपूर्ण अध्ययन किया। नालंदा में कई वर्षो तक रहकर अध्ययन के पश्चात् युवान-च्वाङ्ग ने ''विज्ञप्ति मात्रता सिद्धि' की रचना की। युवान-च्वाङ्ग को एक अन्य विचार प्रणाली 'क्यू-शे' (कोश) का भी जनक माना जाता है। जिसकी स्पष्ट प्रेरणा उसने नालंदा में पढ़ाई जाने वाली 'कोशरचना शास्त्र' विषय से प्राप्त की होगी। युवान-च्वाङ्ग के आध्यात्मिक

विचारों का प्रारंभ वसुबंधु के अभिधर्मकोश से माना जा सकता है। एक अन्य प्रणाली 'ल्यु' (विनय) का जनक भी इन्हें कहा जाता है। इसे जापान में 'रायोत्सु' कहा जाता है।

नालंदा का पुस्तकालय

नालंदा में उच्च शिक्षा के अध्ययन के लिए विशाल शोध सामग्री युक्त पुस्तकालय थे। इसमें तीन विशाल पुस्तकालयों के नाम थे-'रत्नसागर', 'रत्नोदधि' एवं 'रत्नरंजक' । इनके अतिरिक्त एक विशाल पुस्तकालय अन्यत्र भी था, जिसे 'धर्म यज्ञ' कहते थे। इन पुस्तकालयों में अठारह सम्प्रदायों के ग्रन्थों एवं पाण्डुलिपियों का विशाल संग्रह था। इन पुस्तकालयों में सामान्य तथा विशेष दो प्रकार के कक्ष होते थे। सामान्य कक्ष में वे सभी पुस्तकें रखी होती थीं, जो प्रत्येक विद्यार्थी को अनिवार्य विषय के रूप में लेनी पड़ती थीं। विशेष कक्ष में शोध एवं अनुसंधान के लिए बहुमूल्य पांडुलिपियाँ और अध्ययन-सामग्री रखी होती थी, जो अनुसंधानकर्ताओं की आवश्यकताओं को पूरा करती थी। इन पुस्तकालयों में धर्म एवं विज्ञान की पुस्तकों के अलावा संस्कृत, पालि और प्राकृत भाषा की पुस्तकों की संख्या असंख्य थी।

नालंदा के प्रसिद्ध विद्वान

नालंदा में केवल बाहर के ही लोग आते रहे हों, ऐसा नहीं है। यहाँ पर अध्ययन समाप्त करने के बाद कई विद्वान् बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए दूर-दूर के देशों को जाते थे। जैसे-नालंदा के प्रख्यात् विद्वान् संतरक्षित, पद्मसम्भव, कमलशील, स्थिरमति और बुद्धकीर्ति तिब्बत को गए थे। चीन में जाकर नालंदा के प्रसिद्ध आचार्य, जिन्होंने बौद्ध धर्म का प्रचार किया था, वे आचार्य थे-कुमारजीव, परमार्थ, सुधंकर और धर्मकीर्ति। इसमें उल्लेखनीय है कि कुमारजीव ने चीन में जाकर ज्ञान बाँटने में योगदान दिया था। कुमारजीव संस्कृत एवं चीनी दोनों भाषाओं के प्रकाण्ड विद्वान् थे। कुमारजीव ने नागार्जुन, अश्वघोष आदि भारतीय विद्वानों और कवियों के अनेक ग्रन्थों का चीनी भाषा में अनुवाद किया। उनके ग्रन्थ आज तक चीन में वैसे ही पढ़े जाते हैं, जैसे यूरोप में शेक्सपीयर के। प्रसिद्ध विद्वान सिल्वेन लेवी ने लिखा है-

''कुमारजीव सम्भवत: श्रेष्ठ अनुवादक थे और उन्होंने बौद्ध-धर्म की आत्मा को चीन पहुँचाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया।''

नालंदा के ही कुछ अन्य प्रसिद्ध आचार्य थे, जिनकी ख्याति दूर-दूर तक फैली थी, उनमें उल्लेखनीय नाम है-नागार्जुन, धर्मपाल, गुजमति, चन्द्रपाल, प्रभामित्र, जिनमित्र, गुणामित्र और ज्ञानचंद आदि। इनमें नागार्जुन की प्रसिद्धि अत्यधिक थी। वे

दार्शनिक के साथ उच्चस्तरीय वैज्ञानिक एवं धातु विज्ञानी थे। इसीलिए उन्हें भारतीय आइन्स्टाइन भी कहते हैं। नालंदा से कोरिया जाकर प्रचार-प्रसार करने का श्रेय आर्य वर्मा और हुई-न्येह जैसे आचार्यो को जाता है।

बोध प्रश्न

1. **निम्न प्रश्नों के उत्तर दे–**

   1. लेपा कौन था?
   2. युवान-च्वाङ्ग कौन था?
   3. नालंदा विश्वविद्यालय में कितने प्रकार के पाठ्यक्रम थे?
   4. 'रत्न सागर', 'रत्नोदधि' एवं 'रत्नरंजक' किनके नाम हैं?
   5. कुमारजीव कौन थे?

3.4 आइए समझें

अंश-1

इस अंश में हम पाठ के आरंभिक दस अनुच्छेदों को समझेंगे।

नालंदा नालम् और दा के संयोग से बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ होता है कमल यानी ज्ञान देने वाला। पूर्व में नालंदा में काफी सरोवर थे। ये सरोवर ही कमल के मुख्य स्रोत थे। महाविहार की स्थापना के बाद इसका नाम नालंदा महाविहार हो गया। समय के साथ इसके नाम में बदलाव आया और यह नालंदा विश्वविद्यालय के रूप में विख्यात हुआ। नालंदा को प्राचीनकाल से ही वैभवशाली ग्राम का गौरव प्राप्त है। यहाँ लेपा नाम का एक धनी किसान रहता था। एक बार 'तथागत' लेपा के यहाँ अतिथि बन कर आए थे। लेपा ने इस अवसर पर बड़े भवन स्नानागर आदि तथागत को भेंट किये। वह स्वयं उनका अनुयायी बना और नालन्दा में विहार की नींव पड़ी।

6ठीं शताब्दी दुनिया के लिए धार्मिक जागरण काल था। भारत में भी बौद्ध एवं जैन धर्म का उदय हुआ। इन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक कार्य किया। शिक्षा का क्षेत्र भी इससे प्रभावित हुआ। बौद्ध धर्म की स्थापना के साथ ही नालंदा शैक्षिक मानचित्र पर टिमटिमाने लगा। यह मौर्य एंव गुप्त शासन काल में भी पला-बढ़ा। वर्धन काल विशेषकर हर्षवर्द्धन के समय में नालंदा विश्वविद्यालय अपने चरमोत्कर्ष पर था। पूरी दुनिया के शिक्षार्थियों के लिए इसमें नामांकन गौरव की बात थी।